चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक प

1st FEB '52

6

कहते हैं कि किसी समय जीवा नाम का एक लड़का गौएँ चरा कर जिन्दगी बिताता था। चारों ओर मशहूर हो गया था कि उसके हाथ की रेखा अच्छी है और उसके लालन-पालन में गौएँ बड़े सुख से रहती हैं।

जीवा के हाथ में हमेशा एक मुरली रहती थी। वह उसे बजाता तो मालूम होता जैसे भगवान कन्हैया स्वयं बजा रहे हैं। उसकी बाँसुरी की तान सुन कर सब तरह के जीव-जन्तु उसके चारों ओर जमा हो जाते। लोग भी इकट्ठे हो कर उसे घेर लेते और कहते-"जीवा ! और एक बार बजाओ न !" यों गिड़गिड़ा कर फिर उसका गाना सुनते।

यह बात वहाँ से दस कोस की दूरी पर एक शहर में रहने वाले एक धनवान के कानों में पड़ी। उनके पास बहुत सी गाएँ थीं। उनको गाएँ पालने का बड़ा शौक था। इसलिए कहीं कोई अच्छी गाय होती तो वे तुरन्त बहुत सा रुपया देकर उसे खरीद लाते। उस अमीर ने सोचा कि जीवा ही उनके लायक चरवाहा है। इसलिए उन्होंने उसे अपनी गाएँ चराने का काम सौंप दिया।

जीवा उस अमीर की गायों को खूब चराने लगा। वह नदी में ले जाकर रोज़ उन्हें नहलाता और उनकी खूब देख-भाल करता। वह उन्हें अलग-अलग नामों से पुकारता और नज़दीक बुला कर गरदन सहलाता। "बेनी ! इधर आ !" कहते ही कजरी गाय दौड़ी आती। "मोती ! इधर आ!" कहते ही भूरी गाय दौड़ी आती। इस तरह उसकी सब गाएँ बुलाते ही उसके पास दौड़ आतीं।

शिवशङ्कर

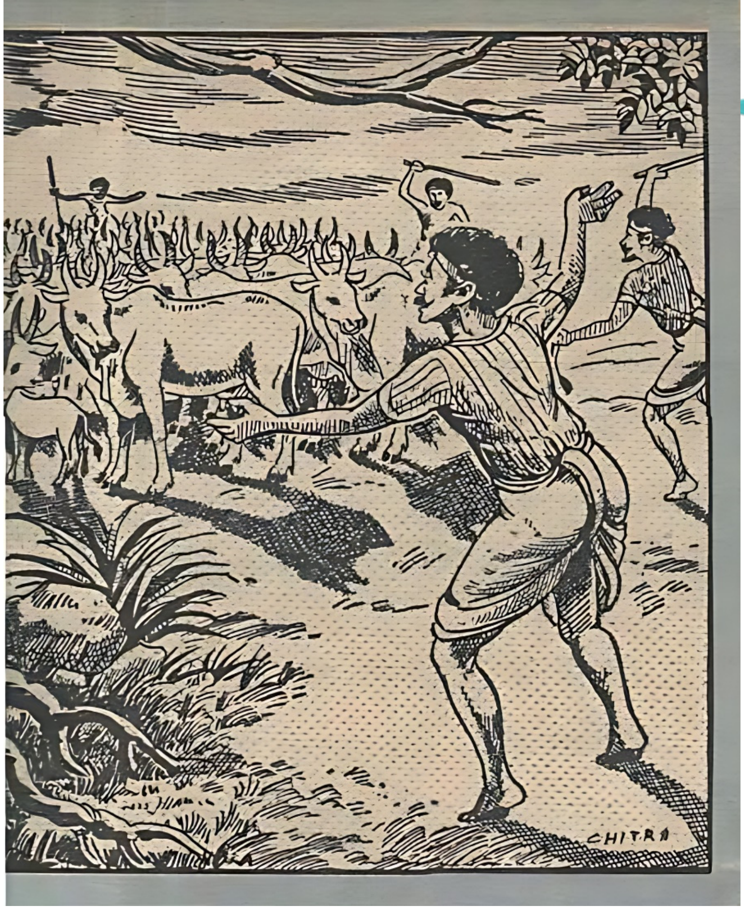

सबेरे ही बछड़ों की रस्सियाँ खोल कर जीवा उन्हें मैदान में ले जाकर छोड़ देता। जीवा को कभी अपनी गायों हाँकने की ज़रूरत नहीं पड़ती। वह हाथ की बाँसुरी से इशारा करता। बस, गाएँ अपने आप उसके पीछे-पीछे चली आतीं ! जीवा उन्हें मैदान में चरने के लिए छोड़ देता और खुद एक पेड़ पर चढ़ कर मौज से बाँसुरी बजाने लगता। गाएँ पागुर करती हुईं उसकी मुरली की तान सुनतीं।

जब दिन ढल जाता तो जीवा एक बार बाँसुरी बजा देता। बस, सब गाएँ आकर उसके चारों ओर जमा हो जातीं। घर जाने पर दूध दुहते वक्त भी जीवा बाँसुरी बजाता। तब गाएँ खुशी के मारे बेसुध होकर ज्यादा दूध दे देतीं।

एक दिन की बात है कि जीवा गायों को मैदान में चरने के लिए छोड़ कर खुद एक पेड़ पर चढ़ गया और बाँसुरी बजाने लगा। इतने में डाकुओं का एक दल उधर आ धमका। सुन्दर गायों को देखते ही डाकू-सरदार का मन लुभा गया। "इन गायों को अपने मुकाम पर हाँक ले जाओ !" उसने अपने साथियों को हुक्म दिया। लेकिन उनके बहुत कोशिश करने पर भी, मारने-पीटने पर भी गाएँ वहाँ से न टसकीं। डाकुओं की तरफ एक बार लापरवाही से देख कर वे निश्चिन्त मन से चरने लग गईं।

यह देख कर डाकुओं के सरदार को बड़ा गुस्सा आया। "रे निकम्मो! इनका चरवाहा कोई जादूगर होगा। उसने इन पर कोई मन्त्र मार दिया होगा। इसलिए चरवाहे को पकड़ लाओ ! नहीं तो, तुम लोगों की खैरियत नहीं !" उसने अपने

साथियों से कहा। तुरन्त अन्य डाकू थर-थर काँपते हुए चारों ओर दौड़े। लेकिन उनमें से एक ने सोचा- "इनका चरवाहा कहीं नज़दीक ही छिपा होगा।" यह सोच कर उसने नज़दीक के झाड़-झङ्खाड़ छान मारे।

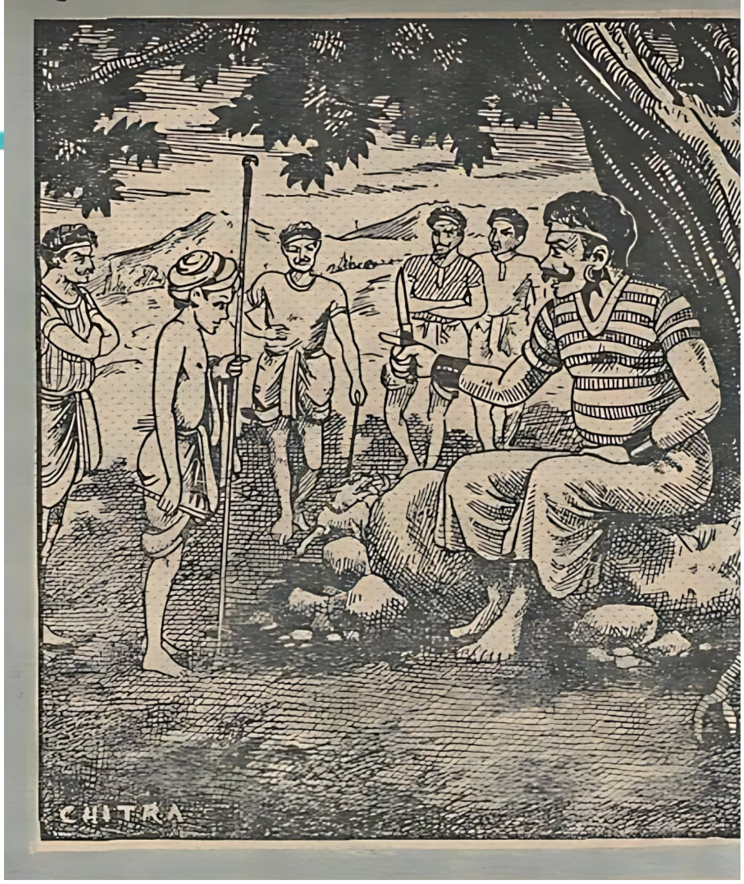

डाकुओं की संख्या बहुत ज्यादा थी। उनका सामना कौन कर सकता था? खास कर जीवा जैसा अकेला लड़का उनके सामने क्या कर सकता था ? इसलिए वह पेड़ से उतर कर झाड़ी में छिप कर डाकुओं की हरकतें गौर से देखने लगा। इतने में डाकुओं का कुत्ता जो उधर आ निकला था उसकी बू पाकर भौंकने लगा। तुरन्त डाकुओं ने उसे चारों ओर से घेर कर पकड़ लिया और अपने सरदार के सामने ले जाकर खड़ा किया। सरदार ने उसे धमकाते हुए कहा-"तू इन गायों को हाँक कर ले आ और हमारी बाड़ी में छोड़ आ ! नहीं तो तेरी खैरियत नहीं !" बेचारे जीवा ने डर के मारे बाँसुरी से इशारा किया और गायों को ले जाकर डाकुओं की बाडी में छोड़ दिया। डाकुओं ने गायों को खूँटों से बाँध दिया और जीवा को अकेले मैदान में छोड़ दिया।

मुकाम पर पहुँचने के बाद उन सुन्दर गायों को देख कर डाकुओं के सरदार को बहुत खुशी हुई। "वाह ! कैसी बढ़िया गाएँ हैं ! इस हृष्ट-पुष्ट बछड़े को मार कर दावत करो! ' उसने कहा। उसके आज्ञानुसार डाकुओं ने बछड़े को मार कर उस का माँस अच्छी तरह पकाया और दावत की तैयारियाँ कीं।

थोड़ी देर बाद डाकू लोग खाने बैठे। लेकिन इतने में एक अजीब बात हुई। मैदान में जीवा ने पेड़ पर चढ़ कर बाँसुरी

बजाई। बस, उसकी बाँसुरी की आवाज़ सुनते ही बाड़ी में की गायों ने अपनी अपनी रस्सियाँ तोड़ डालीं। फाटक तोड़ डाला और दौड़ कर, जीवा के चारों ओर जमा होकर बाँसुरी सुनने लगीं।

उधर सरदार के मुकाम पर सब की थालियों में से पका हुआ बछड़े का माँस गायब हो गया। ऐसा मालूम होता था कि वह कभी परोसा भी न गया हो। यह देख कर सब डाकू अचरज में पड़ गए। इतने में बाँसुरी की तान सुन कर उस ओर गए। मैदान में जाकर उन्होंने देखा कि पेड़ पर जीवा बाँसुरी बजा रहा है और चारों ओर गाएँ खड़ी सुन रही हैं। नज़दीक जाने पर उन्हें वह बछड़ा भी दिखाई पड़ा जिसको उन्होंने मार कर गोश्त भी पकाया था। वह भी तन्मय होकर जीवा की बाँसुरी सुन रहा था। यह देख कर उनके मुँह से कोई बात न निकली!

तब डाकुओं के सरदार ने जीवा के पैरों पर गिर कर माफी माँगी और कहा-"लड़के ! तुम तो कोई मामूली आदमी नहीं हो। तुम सचमुच कृष्ण-कन्हैया हो और तुम्हारे हाथ की बाँसुरी भगवान की बाँसुरी है। आज तक हमने जो पाप-कृत्य किए उनके लिए हमें माफ कर दो। आगे से हम ऐसा नहीं करेंगे।"

सरदार की बातें बेचारे जीवा की समझ में बिलकुल नहीं आईं। वह इतना भोला-भाला था। इसलिए वह कुछ भी जवाब दिए बिना चल पड़ा। उसे तो बस, इसी बात की खुशी थी कि डाकुओं ने उसकी और उसकी गायों की जान छोड़ दी। वह भी उतना ही भोला था जितनी उसकी गाएँ।

प्रदोष और निशीथ ने राक्षस को चकमा देकर दाढ़ी वाले के पास भेज तो दिया था। लेकिन वहाँ जाने के बाद उसको सारा हाल मालूम हो गया था। "क्या तुम उनको वहीं छोड़ आए ? उन छोकरों ने मुझे चकमा देकर न केवल अञ्जन, भस्म आदि हड़प लिए बल्कि तुम्हें भी झाँसा दिया ? बड़े चालाक मालूम होते हैं ये। लेकिन अब भी कुछ बिगड़ा नहीं; तुम तुरन्त लौट कर उन्हें पकड़ लो। नहीं तो हमारे माया-महल का सारा भेद खुल जाएगा। अगर ऐसा हुआ तो हम दोनों की जान पर आ बनेगी। इसलिए जाओ ! जल्दी जाओ !" दाढ़ी वाले ने राक्षस से कहा और उतावली की।

उसकी सलाह के अनुसार राक्षस महल को लौट गया। लेकिन द्वार पर उसे प्रदोष और निशीथ पहरा देते हुए नहीं दिखाई दिए। तब वह आपे से बाहर होकर-"कहाँ हो रे तुम!" कह कर गरजते हुए सरोवर की ओर आया। लेकिन वहाँ भी उसे उनका पता न चला। तब उसने और भी गुस्सा होकर वह सारी जगह छान डाली। शाम तक ढूँढ़ता रहा। फिर भी जब

कोई पता न चला तो आखिर निराश हो वह अपने महल को लौट गया।

शाम तक उदय अपने भाइयों के साथ हंस बना सरोवर में ही रहा। लेकिन राक्षस के चले जाते ही वह तट पर आया और अपने पहले रूप में आ गया। उसके पीछे-पीछे सरोवर वाली लड़की भी बाहर आकर खड़ी हो गई।

उसने उदय से कहा-"तुम कोई अभागे मालूम होते हो ! नहीं तो भटक कर इस महल में कैसे घुस आते ? इस महल के चारों ओर चार कोस तक पहरा देने वाला एक दाढ़ी वाला है जिस की निगाह से कोई नहीं बच सकता। मुझे अब भी अचरज होता है कि तुम लोग कैसे उससे बच कर आ गए ? अब भी अगर तुम अपना भला चाहते हो तो यह जगह छोड़ कर चले जाओ। नहीं तो तुम्हारी खैर नहीं। यह महल एक दुष्ट राक्षस का है। वह अभी बाहर गया हुआ है । वह कब आता है और कब जाता है, किसी को मालूम नहीं होता। उसके आने के पहले ही मैं एक उपाय बता देती हूँ जिससे तुम्हारे दोनों भाई अपने असली रूप में आ जाएँगे। बस, ऐसा करो और तीनों यहाँ से चले जाओ !"

लेकिन उसकी बातें सुन कर उदय ने कहा-"हम यहाँ भूले-भटके नहीं आए हैं। इस महल का भेद जानने के लिए ही जान पर खेल कर आए हैं। इसलिए हमारे बारे में तुम कोई फिक्र न करो! अगर कुछ मदद करना चाहती हो तो उस दैत्य के बारे में जो कुछ जानती हो, मुझे बता दो। खैर, तुमने मुझे अपना परिचय तो

दिया नहीं ! अगर तुम्हें कोई उज्र न हो तो तुम्हारा परिचय पाकर मुझे बड़ी खुशी होगी।"

तब उस लड़की ने कहा-"मुझे तो कोई उम्र नहीं। लेकिन मेरा परिचय जान कर तुम क्या करोगे, यह मैं नहीं जानती। लेकिन तुम चाहते हो तो बता दूँगी।" यह कह कर वह सरोवर में उतरी और दो हंसों को बुला लाई। किनारे आकर उन दोनों को भी उसी की जैसी सुन्दर राजकुमारियों का रूप मिल गया।

तीनों का रूप बिलकुल एक सा देख कर उदय ने पूछा- "क्या तुम जुड़वीं बहनें हो ?" और उनको हामी भरते देख कर उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। उसने कहा-"हम तो इतने दिनों से तुम्हीं को खोज रहे थे। तुम राजा दानशील की बेटियाँ हो न ?" उसकी बात सुन कर उन लड़कियों को भी बड़ा अचरज हुआ। "सच तो है ! यह तुमको कैसे मालूम हुआ ?" उन्होंने तुरन्त पूछा !

"मालूम क्यों न होगा ? हम तो तुम्हारा सारा जन्म-बृत्तान्त जानते हैं। तुम्हारे पिता जी का आशीर्वाद लेकर ही हम तुम्हें खोजने के लिए घर से निकल पड़े। तुम्हारा नाम ?" उदय ने पूछा।

"सुहासिनी ! अगर तुम सचमुच हमारा जन्म-बृत्तान्त जानते हो तो बाकी दोनों नाम तुम जानते ही होगे।" उस लड़की ने जवाब दिया।

"जानते हैं । लेकिन हमने कभी नहीं सोचा था कि इतनी आसानी से और इतनी जल्दी तुम लोगों से भेंट हो जाएगी। यह

खुशखबरी सुन कर मेरे भाई कितने खुश होंगे ?" यह कह कर उदय उदास हो गया ! क्योंकि उसके भाई मानव-रूप में नहीं थे।

यह देख कर सुहासिनी ने कहा- "उदास मत हो" और सरोवर में उतर कर थोड़ी ही देर में वानर बने निशीथ और शिला बने हुए प्रदोष को लेकर बाहर आई। फिर वह उदय को साथ लेकर उस बाग में आम के पेड़ के पास गई। उस पेड़ की बगल में कुछ कुकुरमुत्ते उग रहे थे। उसने उदय से उनमें से कुछ उखाड़ लेने को कहा। उदय ने ऐसा ही किया। फिर वह उसे और आगे ले गई। वहाँ एक राक्षस की मूरत थी। उस मूरत के मुँह से पानी बह रहा था। उसने उदय से पत्तों के दोने में वह पानी भर लाने को कहा। उदय ने वैसा ही किया। फिर दोनों सरोवर के पास लौट आए। वहाँ आकर सुहासिनी ने कुकुरमुत्तों को बन्दर को खिलाने को कहा। ऐसा करते ही निशीथ को अपना असली रूप मिल गया। फिर दोने में का पानी मूरत पर छिड़कते ही प्रदोष को भी अपना रूप मिल गया।

तब उदय ने अपने भाइयों को उन लड़कियों का परिचय देकर कहा- "देखो न ! हम जिन राजकुमारियों की खोज में इतनी दूर आए यही हैं वे! बस, समझ लो कि हमारा श्रम सफल हो गया। अब हमें सिफ़ यह सोचना है कि हम इन्हें लेकर किस तरह झट माया-महल से निकल कर भाग जाएँ ?"

तब सुहासिनी ने कहा - "लेकिन वह उतनी आसान बात नहीं है। हमारी रक्षा

की बात छोड़ दो ! तुम लोग अपनी जान बचा कर भाग जाओ तो भी गनीमत है !" यों वह और भी कुछ कहना चाहती थी कि इतने में एक बड़ा भारी बवण्डर उठा। उसे देखते ही सुहासिनी ने कहा-"देखो ! देखो ! वह आ रहा है ! वह बवण्डर ही उसकी निशानी है। हम अब जाती हैं सरोवर में ! लेकिन तुम लोगों का क्या हाल होगा ? तुम हंस बन जाओगे तो भी वह तुम्हें पहचान लेगा। इसलिए सावधान !" कहती हुई सुहासिनी अपनी बहनों के साथ सरोवर में कूद पड़ी।

झट उदय ने अपने पास का सफेद भस्म निकाल कर अपने और अपने भाइयों के ऊपर छिड़क लिया। तुरन्त तीनों अदृश्य हो गए। थोड़ी देर बाद बवण्डर शान्त हो गया। लेकिन एक विकराल गिद्ध आकर सरोवर के किनारे उतरा। ज़मीन पर उतरते ही वह गिद्ध एक भयङ्कर दैत्य बन कर खड़ा हो गया।

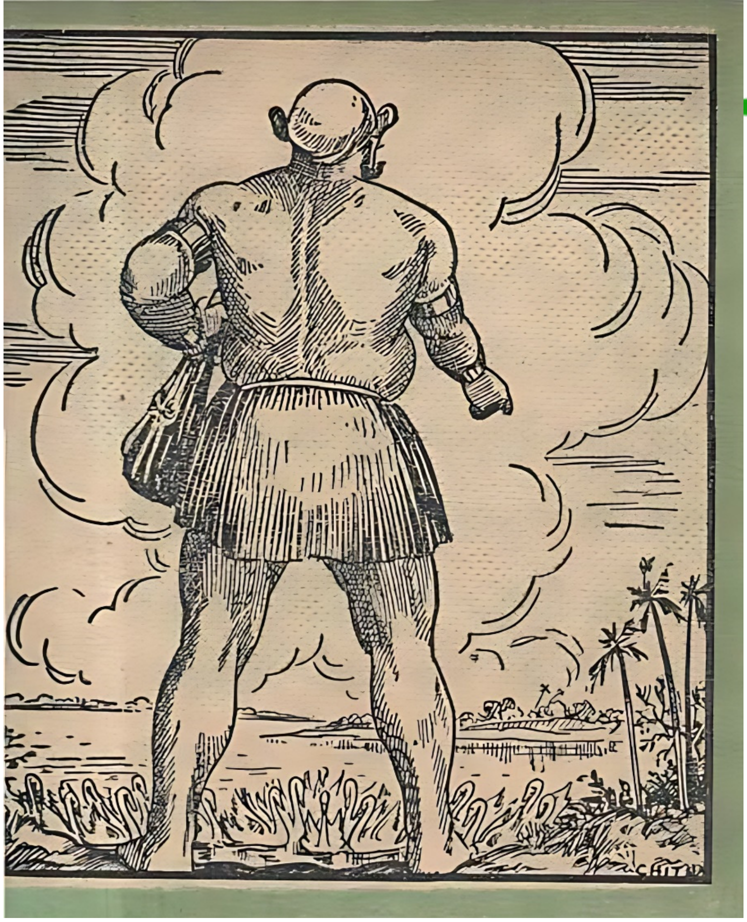

उस राक्षस के वहाँ आकर खड़े होते ही सरोवर के सभी हंस पंख फड़फड़ाते हुए आकर किनारे के पानी में कतार बाँध कर खड़े हो गए। राक्षस ने उनका मुआयना किया और फिर गिद्ध का रूप धारण कर साँय से आसमान में उड़ गया।

तब तक खूब अन्धेरा छा गया था। उदय ने भस्म की सहायता से अपने भाइयों सहित असली रूप प्राप्त कर लिया। वे तीन दिन के भूखे थे। इसलिए पहले तौलिया बिछा कर उसके प्रभाव से उन्होंने भर-पेट खा-पी लिया। फिर थोड़ी देर तक उन्होंने वहीं बठ कर उन लड़कियों की राह देखी। लेकिन जब बड़ी देर हो गई और वे नहीं आईं तो उन्होंने सोचा-"रात यहीं काट दें।" लेकिन असली रूप में रहने में कुशल नहीं थी। इसलिए भस्म के प्रभाव से अदृश्य होकर वहीं लेटे रहे।

सबेरा हुआ। भाइयों ने अपना असली रूप अपनाया। इतने में बहनें भी सरोवर से बाहर निकल आईं।

तब उदय ने सुहासिनी से पूछा-"यह राक्षस लौट कर कहाँ गया ? फिर कब आएगा यहाँ ?"

"और जाएगा कहाँ ? शिकार करने गया होगा । शिकार माने जानवरों का शिकार नहीं; 'जुड़वों का शिकार।" सुहासिनी ने जवाब दिया। "यह जुड़वों का शिकार कौन सी बला है ?" उदय ने पूछा।

"वह एक अद्‌भुत रहस्य है। सुनो! यह राक्षस एक देवी का भक्त है। देवी की कृपा से ही वह माया-महल खड़ा किए हुए है। इसलिए उसने देवी के सामने

प्रण किया है कि वह उसके आगे पचास जुड़वों का बलिदान करेगा। जब यह बलि पूरी हो जाएगी तो देवी उसे अनेक तरह के वर देगी। इतना ही नहीं, वह देवी की कृपा से अजर-अमर बन जाएगा। अब तक इस राक्षस के चंगुल में सिफ़ सैंतालीस जुड़वें फँसे हैं। वह एक गिद्ध का रूप धारण कर बाकी तीन जुड़वों की तलाश में सारे संसार में चक्कर लगाता-फिरता है ! बस, उसे यही चिन्ता है कि तीन जुड़वें कब मिलेंगे, कब उसकी पूजा पूरी होगी और देवी उसे वर देगी ?" सुहासिनी ने इस तरह राक्षस का सारा वृत्तान्त सुना दिया।

जुड़वें भाइयों ने बड़े गौर से उसका कहना सुना। अन्त में उदय ने कहा- "आहा ! हमारे भाग अच्छे हैं। कहीं हम उसके हाथ पकड़े गए होते तो आज ही उसकी इच्छा पूरी हो जाती और हम बलि चढ़ जाते !"

"सो कैसे ? क्या तुम लोग भी जुड़वें हो ?" उन लड़कियों ने अत्यन्त चकित होकर पूछा।

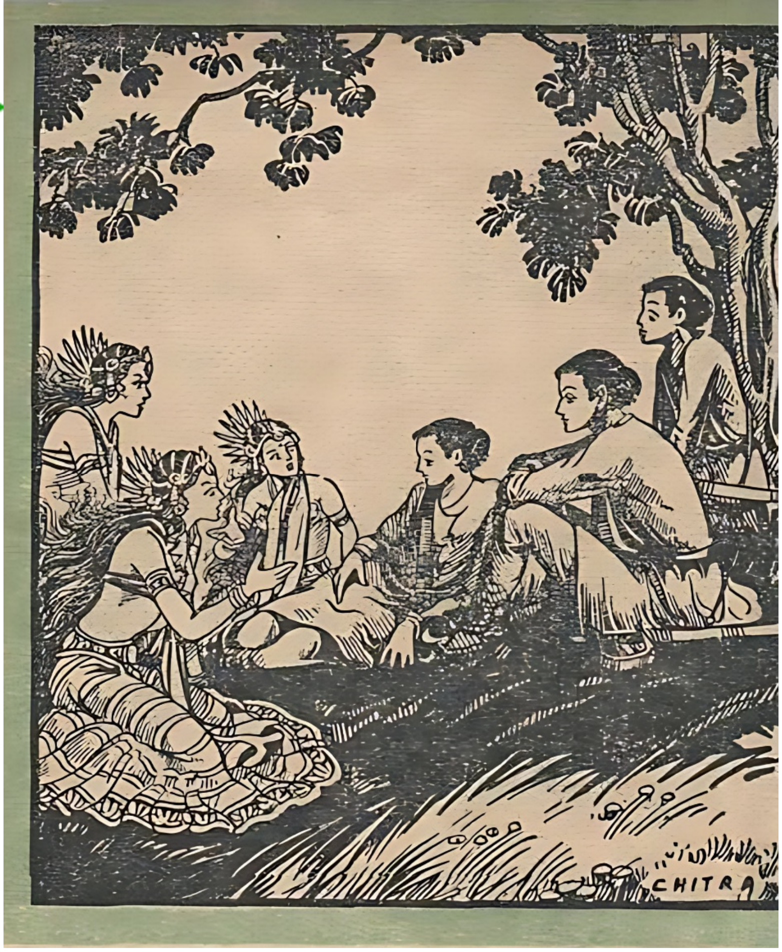

"हाँ; अब हम राक्षस की इच्छा पूरी करेंगे या तुम लोगों को बचाएँगे, यह नहीं मालूम !" उदय ने कहा।

"तब तो तुम लोगों को और भी सावधान रहना होगा।" सुहासिनी ने उन्हें चेताया।

"हाँ, अब हमें भेद मालूम हो गया है। इसलिए आगे से हम सचेत रहेंगे। लेकिन पहले यहाँ से बच कर भागने का उपाय तो बताओ ! मालूम होता है, यहाँ सब जगह माया का जाल फैला हुआ है। अगर तुम बताओ कि यहाँ से भागने में

कौन-कौन सी अड़चनें आएँगी तो हम उनको दूर करने की तदबीर सोचेंगे।" उदय ने कहा।

"इसके लिए सब से पहले यह ज़रूरी है कि तुम लोग चोरी-छिपे राक्षस के पाताल-गृह में घुस जाओ!" सुहासिनी ने उन्हें बताया।

"इसमें क्या दिक्कत है? तुम तो जानती ही हो कि हमारे पास ऐसे अञ्जन हैं, जिनके प्रभाव से हम पल में अदृश्य हो जाते हैं।" उदय ने कहा।

"वैसे काम नहीं चलेगा ! अच्छा हुआ कि तुमने पहले बता दिया ! तुम्हारे अञ्जन और भस्म पाताल-गृह में काम नहीं आएँगे। वहाँ उनका कोई प्रभाव नहीं रहेगा। इसलिए उनका भरोसा छोड़ दो!" सुहासिनी ने उससे कहा।

इतना सुनते ही जुड़वाँ भाइयों के मुँह लटक गए और वे धीरज हार बैठे। यह देख कर सुहासिनी ने कहा-"सोच करने से क्या फायदा है? दिमाग लड़ा कर कोई तदबीर सोच निकालो!"

"सोचने के लिए भी समय चाहिए न?" उदय ने कहा।

"ठीक है; अच्छी तरह सोच लो !" सुहासिनी ने कहा।

[जुड़वें भाइयों को कोई तदबीर सूझी कि नहीं ? क्या वे राक्षस के चंगुल से बच कर भाग सके ? आदि प्रश्नों के उत्तर अगले अङ्क में पढ़िए।]

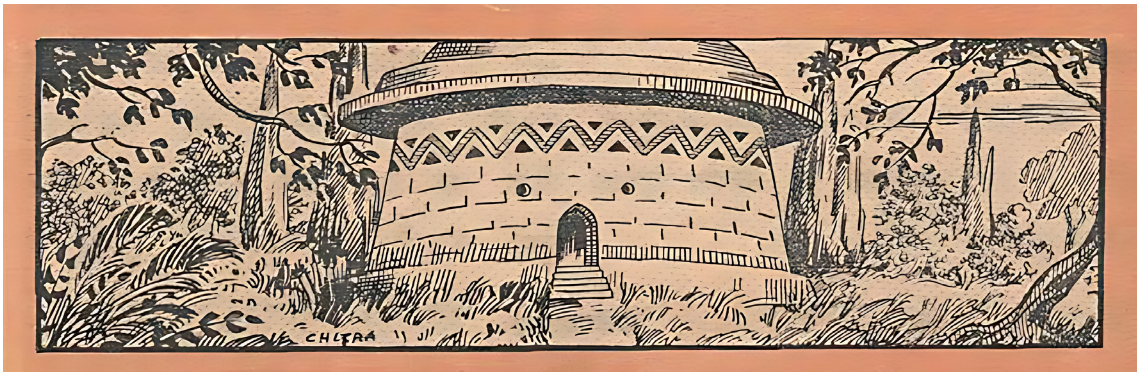

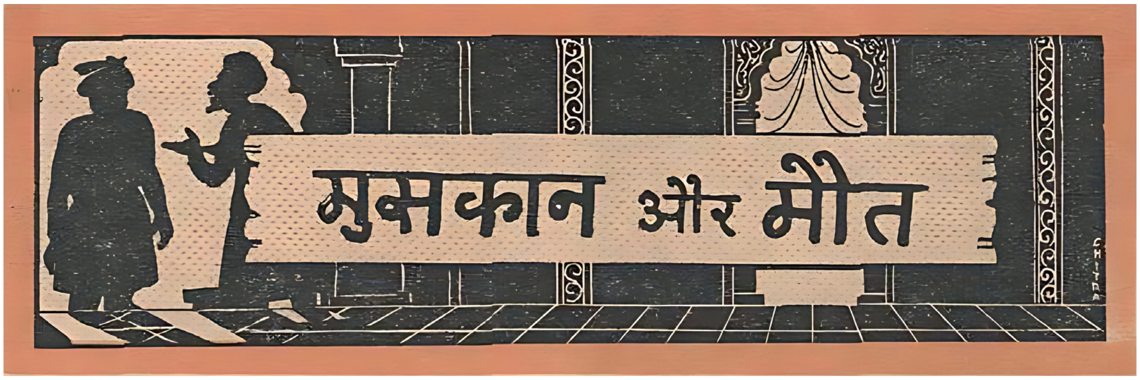

मशहूर मुगल बादशाह अकबर के दिली दोस्त और वजीर का नाम था अबुल फजल। अबुल फ़ज़ल अकबर का दाहिना हाथ था। बादशाह उसकी बात बहुत मानता था। एक दिन जब बादशाह का मिजाज़ बहुत खुश था तो अबुल फजल ने आकर कहा-"जहाँपनाह ! हमारी सरकार से लोग बहुत खुश हैं। उन्हें किसी तरह की शिकायत नहीं। वे कहते हैं कि अकबर जैसा रहम-दिल बादशाह न इसके पहले हुआ और न आगे होगा। इस तरह लोग हुज़ूर की हुकूमत का बखान कर रहे हैं। लेकिन..." कहते-कहते अबुल फ़ज़ल चुप हो गया।

"बात क्या है ? हिचकिचाओ नहीं ! साफ-साफ कह दो !" बादशाह ने कहा। अबुल फजल ने कहना शुरू किया-"हुज़ूर ! मुझे पता चला है कि शाहजादा सलीम अनारकली नामक नाचने वाली की मुहब्बत में पड़ गए हैं। यही नहीं, मुझे यह भी मालूम हुआ है कि वे उससे निकाह करने की कोशिश में लगे हुए हैं। अगर यह बात सच हुई तो जहाँपनाह की इज्जत धूल में मिल जाएगी। उनका घराना लोगों की नजर में बहुत नीचे गिर जाएगा। इससे उनके खानदान के माथे पर कलङ्क का टीका लग जाएगा ! न जाने, लोग इसके खिलाफ कितना हो-हल्ला मचाएँगे ? इसी सोच से मेरा दिल टूक-टूक हो रहा है !" उसने अपने मन का दर्द प्रगट कर दिया।

उसकी बात सुन कर अकबर भी सोच पड़ गया। आखिर उसने कहा-"फ़ज़ल ! तुम्हारी बात पर मुझे यकीन नहीं हो रहा है। दुधमुँहे सलीम के बारे में ऐसी अफवाह किसने फैलाई है ? क्या मैं अपने लड़के का मिजाज़ नहीं पहचानता?

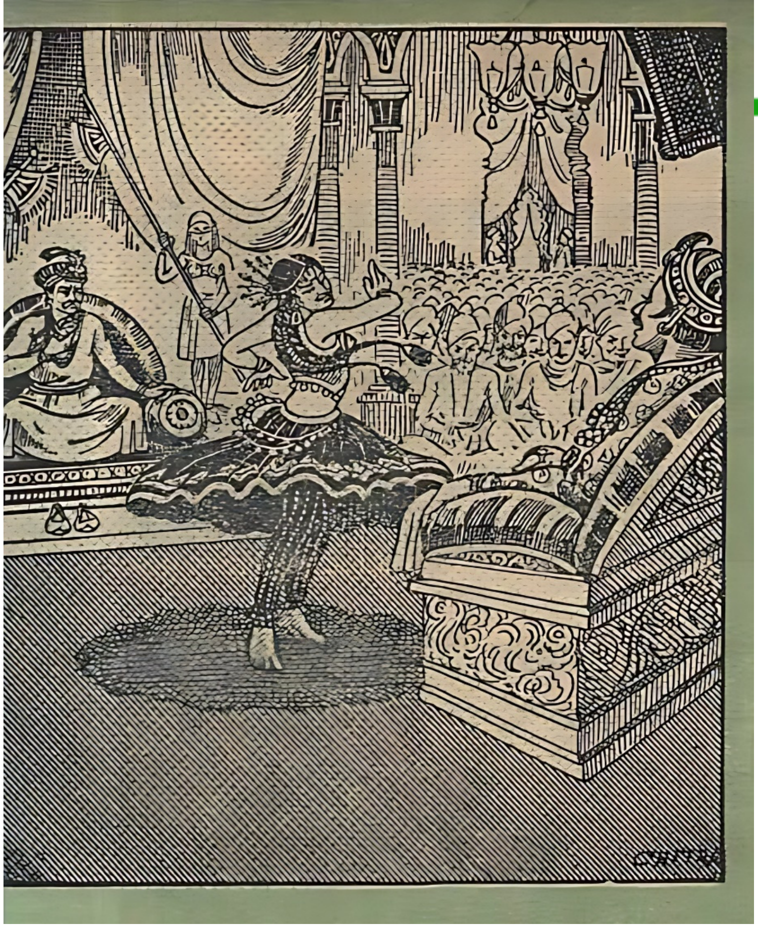

लेकिन तुम्हारी बात पर यकीन किए बगैर कैसे रहूँ ? तुम मुझसे झूठ नहीं बोल सकते ! खैर जो हो, पहले शाहजादे को समझा-बुझा कर देखो!"

* * * * * *

दूसरे दिन रात को दीवाने-खास में अनार-कली के नाच का इन्तजाम हुआ। बादशाह खुद तशरीफ ले आए। और भी बहुत से लोग आए। बादशाह के तख्त के सामने ही शाहजादे की गद्दी थी। उस गद्दी के ऊपर एक आइना लगा हुआ था। नाचने वाली की छोटी से छोटी हरकत भी बादशाह को उस आइने में साफ झलक जाती थी। लेकिन यह बात सिर्फ़ बादशाह को मालूम थी।

नाच शुरू हुआ ! अनारकली ने आकर पहले चारों ओर घूम कर सब को सलाम किया। तुरन्त वह आइने की बात भाँप गई। कायदा था कि बादशाह के सामने नाचते वक्त कभी पीठ नहीं दिखानी चाहिए। यह अनारकली को मालूम था। इसलिए वह बड़ी चतुरता से नाचने लगी।

अनारकली का नाच देख कर सब लोग मगन हो गए। बादशाह खुद होश-हवास खो बैठा। अनारकली अब तक बादशाह की तरफ नज़र किए थी। उसने एक बार भी अपने प्राण-प्यारे सलीम की ओर निगाह न डाली थी।

नाच खतम होने को आया। अनारकली अन्त में चक्कर लगा कर नाच रही थी। उस तरह घूमते वक्त उसने सलीम पर एक बिजली की सी मुसकान फेंक दी। मुसकान सिर्फ सलीम के लिए ही थी। लेकिन अकबर की पैनी नज़रों से वह बच न सकी। बादशाह ने सब कुछ देख लिया।

* * * * * *

फ़ज़ल का कहना सच साबित हुआ। बादशाह ने सोचा कि अब क्या करना चाहिए। फ़ज़ल सलीम को समझा-बुझा कर हार गया था। सलीम ने बेखौफ़ कह दिया था कि इस बारे में उसका मन नहीं बदल सकता। वह अनारकली को दिल दे चुका है; अब उसे लौटा नहीं सकता। जबर्दस्ती करने से बात और भी बिगड़ जाती। इसलिए फ़ज़ल चुप रह गया।

लेकिन अकबर भी बड़ा हठी आदमी था ! उसने फ़ज़ल को अनारकली को समझाने भेजा ! उसने जाकर कहा-"बेटी ! तुम सलीम से निकाह करोगी तो सल्तनत की बुनियाद हिल जाएगी। इसलिए अपना मन बदल लो। और किसी को चुन लो। सलीम से तुम जितने धन-दौलत की उम्मीद रखती हो वह मैं तुम्हें वैसे ही दिला दूँगा।" यों उसने उसे बहुत समझाया।

तब अनारकली ने जबाब दिया-"वजीर साहब ! मैंने कभी सलीम से धन-दौलत नहीं चाही। मैंने उसे अपना दिल दे दिया है। मैं तो कभी की उसकी हो चुकी हूँ। मैं उसके लिए बड़ी से बड़ी कुरबानी करने को भी तैयार हूँ। इस बारे में मेरा मन नहीं बदल सकता।" उसने अपना निश्चय प्रगट किया।

अकबर बादशाह जो बड़ा रहम-दिल मशहूर था, इस मामले में बड़ा सङ्ग-दिल साबित हुआ। शाहजादे से उसे दूर रखने पर मामला तै हो जाएगा, यह सोच कर अनारकली को वह अपने साथ लाहौर ले गया। वहाँ उसने भी उसे समझाया-बुझाया। लेकिन उसका मन नहीं बदला। तब बादशाह ने उसे जिन्दा दीवार में चुनवा डालने का हुकुम दे दिया।

राज-मिस्त्री बुलाए गए। अनारकली वहीं खड़ी थी। बस, उसके चारों ओर ईंटों की दीवार खड़ी होने लगी। दीवार क्या थी ! वह उसकी जिन्दा क़ब्र थी।

दीवार घुटनों तक बन गई। "क्यों, अपना इरादा बदलती हो कि नहीं ?" बादशाह ने पूछा। "नहीं" अनारकली ने मुसकुराते हुए जवाब दिया। इस तरह एक एक ईंट रखते ही अकबर अपना सवाल दुहराता गया। लेकिन वह उसी तरह मुसकुराती हुई अपना अडिग निश्चय जताती गई। दीवार गले तक आई। "क्यों ! अब भी अपना इरादा बदलती हो ?" बादशाह ने फिर पूछा। लेकिन अनारकली ने वही जवाब दिया। आखिर दीवार नाक तक आई। तब अकबर ने फिर एक बार अपना सवाल दुहराया। लेकिन अनारकली ने कहा-"सलीम के लिए जान देने में भी कोई हर्ज नहीं।" गुस्से से तड़प कर अकबर ने राजगीरों को इशारा किया।. दीवार पूरी हुई और अनारकली जिन्दा चुन दी गई।

कुछ दिन बाद जब सारा हाल सलीम को मालूम हुआ तब उसका हृदय भभक उठा। लेकिन अब फायदा क्या था ? आखिर उसने अबुल फजल का खून करवा कर अनारकली का बदला लिया। बाप के खिलाफ बगावत का झण्डा खड़ा किया। तख्त पर चढ़ने के बाद उसने अपनी प्यारी अनारकली के नाम से एक खूबसूरत बाग लगा कर उस में एक कीमती यादगार खड़ी की।

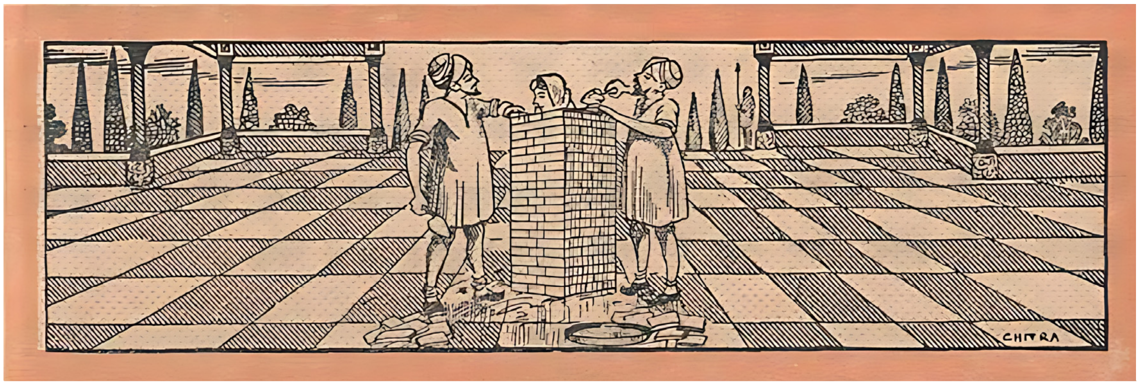

एक बार देवताओं ने एकत्र होकर निश्चय किया कि पृथ्वी पर के मानवों के चाल-चलन की अच्छाई-बुराई जान कर उन्हें उचित पुरस्कार देना चाहिए। यह काम पूरा करने का भार वरुण को सौंपा गया।

वरुण देव एक शुभ-समय में हवाई जहाज़ की सी शकल वाले एक बादल के टुकड़े पर सवार होकर एक बूढ़े भिखारी के रूप में संसार में सञ्चार करने चले।

आधी रात के वक्त एक छोटे से गाँव के नज़दीक पहुँच कर उन्होंने एक छोटे से घर का दरवाजा खटखटाया। घर की मालकिन जाग उठी और उसने आकर किवाड़ खोले। "हाय बूढ़े दादा ! इतनी रात गए, इस सरदी में कैसे भटकते-फिरते हो ? आओ, अन्दर आकर सो जाओ। सबेरे उठ कर चले जाना !" उसने बड़े प्रेम से बूढ़े को अन्दर बुलाते हुए कहा।

बूढ़ा अन्दर जाकर काँपता हुआ बैठ गया। उसके मुँह से बात तक न निकली। यह देख कर उस औरत को बहुत तरस आया। उसने सोचा- "बूढ़ा बड़ी दूर से भूल-भटक कर आया मालूम होता है। लगता है, जैसे खाया-पिया भी नहीं।"

वास्तव में उस घर वाले कोई रईस नहीं थे। उनकी ज़िन्दगी बड़ी मुश्किल से कटती थी। घर के मालिक गाँव से बाहर गए हुए थे। उनके लौट आने की उम्मीद में घर वाली ने उनके खाने के लिए खाना पका कर रख दिया था। अब उसने बूढ़े दादा की सेवा-सुश्रूषा करने के बाद पति के लिए रखा हुआ खाना उसे परोस दिया।

बूढ़े की हालत देख कर उस औरत की आँखों में आँसू भर आए। क्योंकि उसके बदन पर कपड़े नाम के वास्ते थे। फटे-चिटे चीथड़े पहने था। "हाय ! बूढ़े

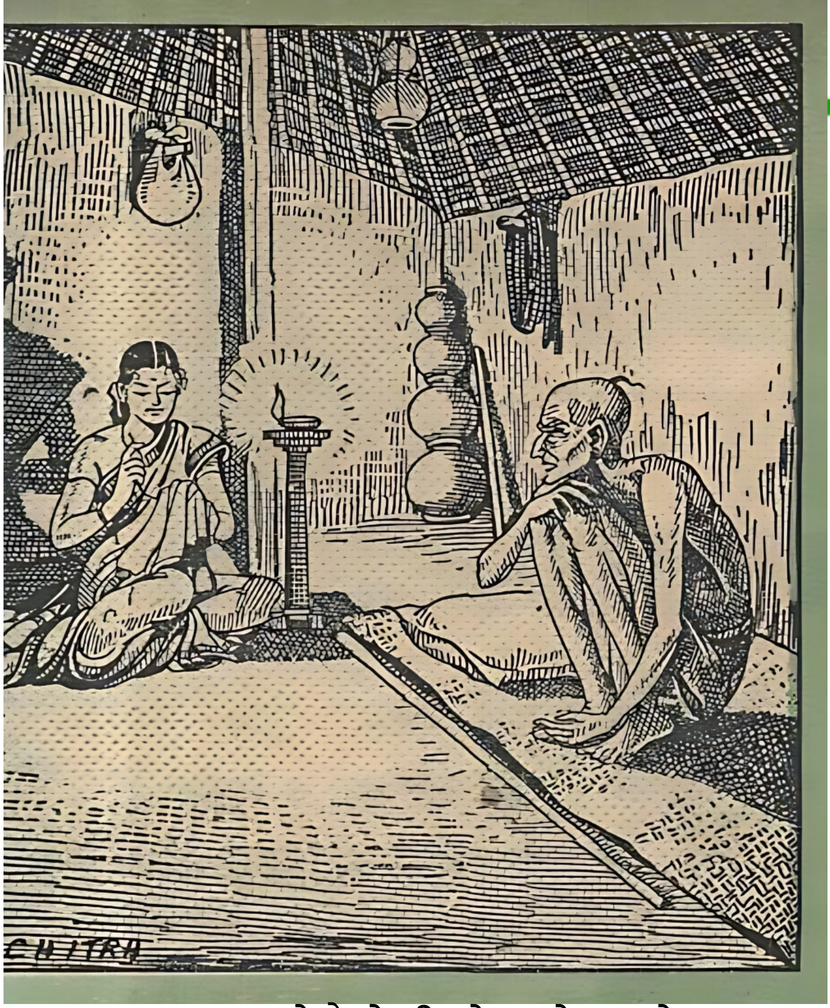

मैंने काम तो पूरा कर लिया ?" उस भली औरत ने खुश होकर सोचा।

फिर उसने कुर्ता बूढ़े को देकर कहा-"दादा ! इसे पहन लो ! सबेरा हो गया है। अब तुम कहाँ जाकर भोजन करोगे ? इसलिए ठहरो! मैं तुम्हें कुछ खिला-पिला दूँगी। तब तुम चले जाना।" यह कह कर उसने बूढ़े को बड़े प्रेम से खिलाया पिलाया। बूढ़े को बड़ी खुशी हुई। उसने पोपले मुँह से उसे आशीर्वाद देकर कहा-"बेटी ! तुम्हारी दया से मेरी जान बच गई। अब मैं जाता हूँ। लेकिन सुन लो बिटिया ! आज सबेरे तुम जो काम करना शुरू करोगी शाम तक वही करती रहोगी।" यह कह कर बूढ़ा देहली से गुजरा और अदृश्य हो गया।

दादा ! ये कैसे चीथड़े पहने हुए हो ? तिस पर इतनी ठण्ड में ?" यह कह कर वह अन्दर जाकर गठरी में से पति की बची-खुची धोती का एक टुकड़ा फाड़ कर ले आई और बूढ़े को देकर बोली-"हमारे पास भी सिर्फ़ एक ही धोती है। उसका ही यह एक टुकड़ा है। लो, इसे ओढ़ लो।"

बूढ़ा सो गया। तब वह औरत अपने पति का एक फटा-चिटा कुर्ता खोज लाई और उसे पहनने के लायक बनाने के लिए सीने बैठी। उसको सीकर ठीक करते-करते सबेरा हो गया। "सो न सकी तो क्या हुआ ?

बूढ़े के जाने के बाद उस औरत को अपने पति की धोती की बात याद आई, जो उसने बूढ़े को देने के लिए फाड़ी थी। वह उसे हाथ से नापने चली कि देखें कितनी बची है; वह किसी काम आयगी कि नहीं ?

लेकिन बड़ी अजीब बात हुई कि वह ज्यों-ज्यों नापती जाती त्यों-त्यों धोती बढ़ती ही जाती। मालूम होता था जैसे द्रौपदी के चीर की तरह उसका कोई अन्त ही नहीं

है। वह रसोई करने जाना चाहती थी। लेकिन धोती नापे बिना कैसे जाती ? इस तरह शाम तक वह उसी तरह धोती नापती रही और सारा घर कपड़े से भरता गया। शाम

होते ही वह खतम हो गया। पति के लौटते ही उस औरत ने सारी बात उससे कह सुनाई।

उस कपड़े को बेच कर उन्होंने बहुत सा रुपया कमाया और उस धन से सुख से जीवन बिताने लगे। धीरे-धीरे यह खबर सारे गाँव में फैल गई।

उस औरत के पड़ोस में रहने वाली मँगनीबाई ने जब से यह खबर सुनी तब से उसका पेट फूलने लगा। उसने जाकर खुद उस औरत के मुँह से सारी कहानी सुनी। तब से वह मन ही मन लालाइत रहने लगी कि ऐसे कोई मेहमान मेरे घर भी आएँ तो अच्छा हो। उसकी इच्छा पूरी भी हुई। कुछ दिन बाद आधी रात के वक्त एक बूढ़े ने आकर मँगनीबाई जी के घर का दरवाजा खटखटाया।

मँगनीबाई तो बस, इसी की राह देख रही थी। उसने झट उठ कर दरवाजा खोला। मुँह पर एक बनावटी हँसी दिखाती हुई बड़े प्रेम

से "दादाजी ! आइए ! अन्दर आइए!" कह कर उसे घर में ले गई। बूढ़ा भूखा है कि नहीं, यह जाने बिना ही उसने खाना परोस दिया। वह अपनी पड़ोसिन की ठीक नकल उतारना चाहती थी। इसलिए बूढ़े पर बड़ी दया दिखाते हुए उसने अपने पति की एक धोती फाड़ कर उसे पहनने को दी, यद्यपि उसके घर में और भी नई धोतियाँ थीं। "दादा ! यहीं लेट रहो ? सबेरे उठ कर चले जाना!" उसने झूठ-मूठ का प्रेम दिखाते हुए कहा।

इतने में सबेरा हो गया। "बेटी ! अब मैं चला !" बूढ़े ने कहा। "अरे अभी

नहीं ! जरा ठहरो, कुछ खा-पी करके जाना ! नहीं तो राह में भूख लग जाएगी।" मँगनीबाई ने कहा। यह कह कर उसने बूढ़े को खिला-पिला दिया।

बूढ़े ने इस बार भी पहले की तरह ही कहा-"बिटिया ! तुम्हारी कृपा से मेरी जान बच गई। अब मैं जाता हूँ। लेकिन बिटिया ! एक बात सुन लो। मेरे जाते ही तुम जो काम शुरू करोगी, शाम तक वही करती रहोगी।" यह कह कर बूढ़ा देहली से उतरा और चार कदम चल कर अदृश्य हो गया।

बूढ़े के जाने के बाद मँगनीबाई ने भी पति की फटी हुई धोती को नापना चाहा। लेकिन इतने में गोठ में गौओं को प्यास लगने के कारण वे जोर से रँभाने लगीं। "चलूँ, जरा उन्हें चारा-पानी दे आऊँ ! फिर दिन भर निश्चिंत होकर कपड़ा नापती रहूँगी।" मँगनीबाई ने सोचा और घड़ा उठा कर चली।

उसने कुएँ के पास जाकर पानी खींचना शुरू किया। नाँद भरते ही उसने पानी भरना बन्द करना चाहा। लेकिन रस्सी उसके हाथ से छूटती ही न थी। आखिर शाम तक उसे उसी तरह पानी भरना पड़ा। यहाँ तक कि उसका खींचा हुआ पानी सारे घर-बार में घुटनों तक आ गया। यहाँ तक कि पानी गलियों में बहने लगा। सारा गाँव कीचड़ से भर गया और सब लोग आकर उसे कोसने लगे। पानी खींचते-खींचते हाथों में छाले पड़ गए; ऊपर से गाँव वालों की गालियाँ भी खानी पड़ीं।

भगवान की नज़रों में सब बराबर हैं। लेकिन जिनके मन में जैसी भावना रहती है उनके कामों का उन्हें वैसा ही फल मिलता है।

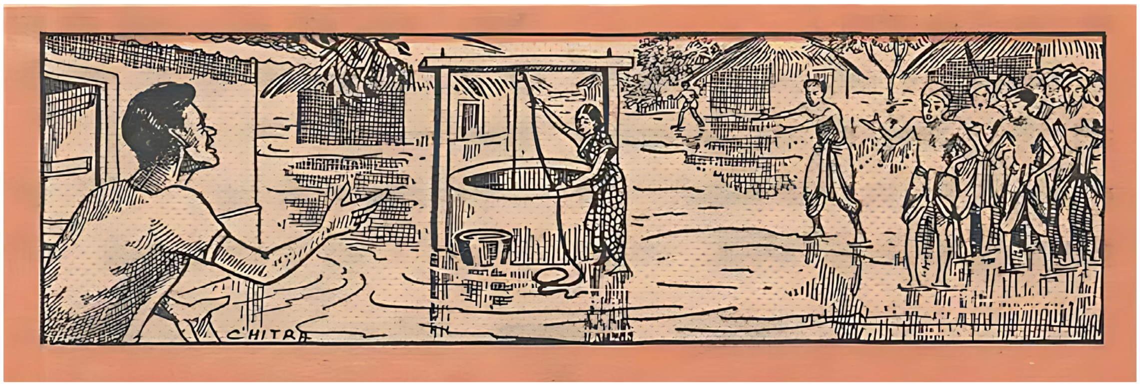

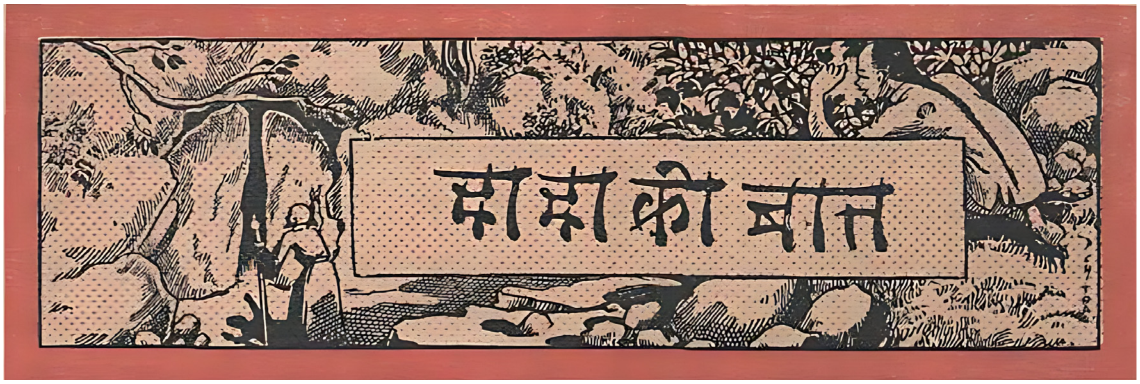

किसी समय चीन में चाँग नाम का एक गरीब लड़का रहा करता था। वह जिस जगह रहता था वह पहाड़ों से भरी थी। लोगों का कहना था कि उन पहाड़ों में एक पर बड़ी अजीब-अजीब चीज़ें नज़र आतीं हैं। इसलिए चाँग हर रोज़ उन पहाड़ों पर घूमने जाता था।

इस तरह बहुत दिन तक घूमने के बाद उसे एक जगह एक गुफा दिखाई दी। उस पर एक चट्टान किवाड़ की तरह भिड़ाई हुई थी। चाँग खड़ा-खड़ा सोचने लगा कि अन्दर कैसे जाऊँ ? इतने में किसी के आने की आहट सुन पड़ी। चाँग एक जगह छिप कर बैठ गया और देखने लगा कि कौन कहाँ जाता है!

थोड़ी देर में एक बूढ़ा वहाँ आया और उस दरवाज़े के सामने खड़ा होकर तीन बार बोला-"कैकू आया, खोल किवाड़ !" बस, दरवाज़ा खुल गया और बूढ़े ने अन्दर प्रवेश किया। थोड़ी देर बाद उसने फिर बाहर आकर तीन बार कहा-"कैकू जाता, लगा किवाड़!" बस, दरवाज़ा बन्द हो गया और बूढ़ा चला गया।

बूढ़े के आँखों से ओझल होते ही चाँग लपक कर उस दरवाज़े के पास पहुँचा और बोला- "चाँग आया, खोल किवाड़ !" लेकिन किवाड़ न खुले। तब उसे याद आया कि बूढ़ा तीन बार बोला था। वह भी और दो बार बोला। बस, तुरन्त किवाड़ खुल गए।

चाँग ने खुशी-खुशी अन्दर प्रवेश किया। बड़ी विशाल गुफ़ा थी वह। देखने में एक नली सी गोल जान पड़ती थी। चारों ओर चट्टान ही चट्टान नज़र आती थी। वहाँ छः टीले थे जो गुफ़ा की दीवारों से सटे हुए थे। और एक टीला बीचों-बीच

था। वहाँ पहुँचते ही चाँग को एक सङ्गमरमर का पत्थर दिखाई दिया। चाँग ने ज्यों-ही उस पर पैर रखा त्यों ही वह फिसल कर नीचे गिर पड़ा और सङ्गमरमर से पैर लगते ही वह टीला ज़ोर से चक्कर मारने लग गया।

देखते ही देखते वह टीला ज़मीन के अन्दर धँस गया और उस जगह एक बड़ा सूराख बन गया। अब चाँग के मन की उत्सुकता और भी बढ़ गई। क्योंकि उस सूराख में नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। चाँग उन सीढ़ियों पर से जल्दी-जल्दी नीचे उतर गया। नीचे जाने पर उसे एक बहुत बड़ा दरवाज़ा और उसमें लगे हुए काठ के किवाड़ दिखाई दिए।

इस दरवाज़े पर भी चाँग ने तीन बार मन्त्र पढ़ा। तब किवाड़ खुल गए और उसे राह मिल गई। दरवाज़ा खुलते ही उसे बड़ी तेज़ रोशनी दिखाई दी। उस रोशनी में तरह-तरह की किरणें थीं। एक-एक किरण एक-एक रङ्ग की थी। जब-जब किरणें ज़मीन पर पड़तीं, तब-तब रङ्ग बदल जाते और देखने में बहुत सुहावने लगते।

इन रङ्गीले किरणों को जी भर कर देखने के बाद चाँग चार कदम आगे बढ़ा तो उसे और एक दरवाज़ा दिखाई दिया। इसमें जो किवाड़ लगे हुए थे उन पर तरह-तरह के बेल-बूटे कढ़े हुए थे । चाँग ने तीन बार किवाड़ खोलने को कहा तो किवाड़ खुल गए। अन्दर जाने पर उसे एक सुन्दर बाग दिखाई दिया। उसमें तरह-तरह के पेड़-पौधे लगे हुए थे। तरह-तरह के फूल खिल रहे थे और तरह-तरह के पशु-पक्षी स्वच्छन्द होकर विचर रहे थे। यह सब देख कर चाँग का वहाँ से लौटने का मन न हुआ। परन्तु एक तरफ़ तो उसे भूख लग रही थी। दूसरी तरफ़ यह डर भी लग रहा था कि

कहीं कोई आकर न पकड़ ले। इसलिए चाँग सावधानी से मन्त्र पढ़ कर, तीनों दरवाज़े बन्द करके बाहर आया और घर की ओर लौट चला।

* * * * *

घर लौटने के वाद चाँग ने जो जो अजीब बातें देखीं थीं, जाकर सब अपनी नानी से कह सुनाई। नानी को चाँग से बहुत प्रेम था। क्योंकि वही उसका सब कुछ था। वह हर बात में चाँग की मदद करती थी। सारा हाल सुनने के बाद बूढ़ी ने प्यार से पूछा-"बेटा चाँग ! क्या वे तमाशे मुझे नहीं दिखाओगे ?" नानी कभी उससे कुछ माँगती न थी। इसलिए चाँग उसकी बात न टाल सका।

दूसरे दिन वह उसे अपने साथ लेकर चला। उसने अपनी नानी से पहले ही बता दिया था कि गुफा देखने में खौफनाक होगी; लेकिन उससे डरना नहीं चाहिए। मन्त्र पढ़ कर उसने दरवाज़े खोले। अन्दर टीले वगैरह देख कर बूढ़ी पहले तो डर गई। लेकिन चाँग ने उसे धीरज बँधाया। रङ्गीन किरणें देख कर उसकी आँखें चौंधियाने लगीं। लेकिन बाग में जाकर जब उसने

पेड़-पौधे, फल-फूल देखे तो उसके अचरज का ठिकाना न रहा।

सब कुछ दिखाने के बाद चाँग ने लौटने की सोची। लेकिन चार कदम चल कर, उसने पीछे घूम कर देखा तो बुढ़िया गायब थी। चाँग ने सारी गुफा छान डाली। ज़ोर-ज़ोर से पुकारा। लेकिन कहीं आहट न पाई। फिर वह घबरा कर घर की तरफ़ दौड़ा। उसने सोचा-"शायद वह मुझसे पहले ही घर पहुँच गई हो।" लेकिन बुढ़िया वहाँ नहीं थी। तब वह फिर गुफ़ा की तरफ़ दौड़ा और पागल की तरह इधर-उधर भटकने लगा। जब कुछ नहीं सूझा तो

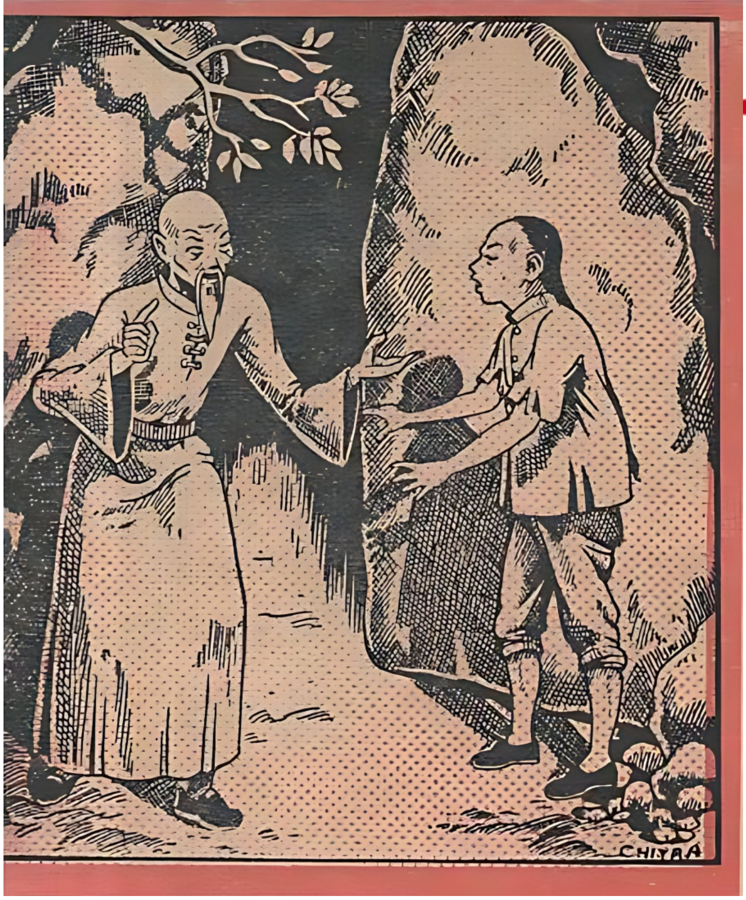

जाकर मन्त्र पढ़ कर दरवाज़ा खोलना चाहा। लेकिन इस बार दरवाज़ा नहीं खुला। अब चाँग को सचमुच बड़ा डर लगने लगा। इतने में वह बूढ़ा कैकू जो उसे पहले दिन दिखाई दिया था, उसके सामने आ खड़ा हुआ। उसने कहा-"नादान लड़के ! अब तुम अपनी नानी को न पा सकोगे। तुम चोरी से इस गुफ़ा में घुस आए थे; आगे कोई इस तरह न घुस पाए, इसलिए मैंने तुम्हारी नानी को रखवाली का काम सौंपा है। तुम जाते क्यों नहीं ?" उसने डाँट कर कहा।

चाँग ने गिड़गिड़ा कर कहा-"बूढ़े दादा ! मैं नानी के बिना एक पल भी नहीं रह सकता। मुझे छोड़ कर वह भी नहीं रह सकती। इसलिए दया कर उसे छोड़ दो। अपराध मेरा है। जो दण्ड देना हो मुझे दो। उसे इस बार किसी तरह माफ़ कर दो। फिर कभी तुम्हारी इजाज़त के बिना इस गुफ़ा में कदम नहीं रखेंगे।" इस पर बूढ़े को तरस आ गया और उसने कहा-"लड़के ! मैं उसे छोड़ नहीं सकता। लेकिन तुम बहुत गिड़गिड़ा रहे हो; इसलिए साल में एक बार आकर उसे देख लिया करो, इसकी इजाज़त देता हूँ। तुम मेरी बात पर विश्वास करो। वह तुम्हारे लिए ज़रा भी सोच नहीं कर रही है। बूढ़ी बहुत सुख से है। क्योंकि मैंने उससे कह दिया है कि तुम राजा के दामाद बनोगे। यह बात सुनते ही वह बिलकुल निश्चिन्त हो गई है।"

उसकी बात सुन कर चाँग ने अचरज के साथ पूछा-"बूढ़े दादा ! आप मेरी हँसी क्यों उड़ा रहे हैं ? मैं कहीं का कङ्गाल, राजा का दामाद कैसे बनूँगा ?"

"लड़के ! मेरी बात कभी झूठी नहीं होती। तुम कुछ चिन्ता न करो ! पहले

यहाँ से चले जाओ !" यह कह कर बूढ़े ने उसको वहाँ से ज़बर्दस्ती भगा दिया।

बूढ़े की बात पर चाहे विश्वास हो या न हो, उसके किए कुछ नहीं हो सकता था। इसलिए चाँग घर लौट आया और किसी तरह दिन बिताने लगा। वह हर साल एक बार जाकर अपनी नानी को देख आता। इस तरह उसके जीवन के सोलह साल बीत गए और वह जवान बन गया।

* * * * * *

चाँग के पड़ोस में एक गरीब परिवार रहता था। वे जङ्गल से लकड़ियाँ चुन लाते और उन्हें बेच कर अपनी जीवनी चलाते थे। उन बेचारों के कोई सन्तान न थी।

एक दिन वह लकड़हारा जङ्गल में लकड़ियाँ लाने गया था कि उसे एक झाड़ी में किसी बच्चे के रोने की आवाज़ सुनाई दी। जाकर देखने पर उसे एक बड़ी खूबसूरत लड़की दिखाई दी। भगवान की देन समझ कर वह उस बच्ची को घर लाकर पालने लगा। धीरे-धीरे जब वह लड़की सयानी हुई तो उसने उसका चाँग के साथ ब्याह कर दिया। क्योंकि चाँग भी पड़ोस में ही रहता था और लोग उसकी बड़ी बड़ाई करते थे।

चाँग अपनी पत्नी के साथ सुख से दिन बिता रहा था कि एक दिन उसके घर एक दम्पति मेहमान बन कर आए। चाँग ने उन्हें आसन पर बिठाया और खातिर की। चाँग की स्त्री अन्दर से पीने के लिए पानी ले आई। उसके देहली पर कदम रखते ही मेहमान की स्त्री उसकी ओर गौर से देखने लगी। नज़दीक आने पर उसने और भी गौर से देखा। न मालूम क्यों, चाँग की पत्नी का हृदय भी उसकी ओर खिंच रहा था। दोनों के दिलों में एक तरह की अज्ञात खलबली मच रही थी। अचानक चाँग की स्त्री को उस नई आई हुई औरत ने गले से

लगा कर माथा चूम लिया। तब चाँग की स्त्री को बहुत अचरज हुआ।

यह देख कर उस मेहमान ने भी 'मेरी बेटी ! मेरी बेटी !' कह कर बड़े आनन्द से चाँग की स्त्री के सिर पर हाथ फेरा। यह सब पहले चाँग की समझ में न आया। इतने में बहुत से दरबारी और नौकर-चाकर सब वहाँ आ गए। तब उन दम्पति ने चाँग की स्त्री को उन सब को दिखा कर कहा-"हमारी बिटिया मिल गई। अब हमारे सारे कष्ट दूर हो गए।" यह सुन कर सब लोगों ने अपनी खुशी ज़ाहिर की। तब चाँग की समझ में आ गया कि वे दोनों राजा-रानी हैं और उसकी स्त्री उनकी बेटी है।

तब राजा ने चाँग को बुला कर कहा- "बेटा ! बारह साल पहले हमारी लाड़ली बिटिया खो गई थी। इकलौती होने के कारण हम इसे बड़े लाड़-प्यार से पालते थे और बहुत से गहने पहनाते थे। कोई चोर-डाकू इसे उठा ले गए होंगे। उन्होंने गहने छीन कर इसे जङ्गल में छोड़ दिया होगा। उस दिन से हम छद्म-वेष धारण कर इसकी खोज करते ही आ रहे हैं। आज हमारा श्रम सफल हुआ। सचमुच हमारे भाग्य अच्छे हैं।"

"यह वास्तव में मेरा सौभाग्य है !" चाँग ने आनन्द से कहा।

उसी दिन चाँग को अपनी नानी को देखने भी जाना था। इसलिए वह अपनी पत्नी, राजा-रानी और दरबारियों को भी अपने साथ ले गया और उन्हें गुफ़ा के तमाशे दिखाए। नानी ने चाँग और उसक पत्नी को आशीर्वाद दिया। चाँग बूढ़े दादा को प्रणाम करके कहने लगा-"पहले मुझे आपकी बात पर विश्वास नहीं हुआ था। लेकिन वह सच निकली।" बूढ़ा मुसकुराने लगा। अन्त में सब लोग खुशी- खुशी राज-महल को लौट गए।

रामनगर में केशवसिंह नामक एक आदमी थे। उनके सामने के घर में कमला नाम की एक दस साल की लड़की रहती थी। वह बड़ी होशियार थी। पढ़ती तो पाँचवे दर्जे में थी; लेकिन बाहरी बहुत सी किताबें पढ़ लेती थी। वह जब कोई पद्य पढ़ने लगती तो केशवसिंह सुन कर सोचते-"वाह ! कितना अच्छा पढ़ती है ! जैसे वसन्त में कोयल गाती हो !"

एक दिन कमला किसी किताब में से ये पंक्तियाँ पढ़ने लगी-"नमक कपूर एक से होते, पर दोनों के स्वाद विभिन्न। मानव सभी एक से होते, पर उनके गुण होते भिन्न।" उसी समय केशवसिंहजी अपने घर के चबूतरे पर बैठे कुल्ला कर रहे थे। उन्होंने ये पंक्तियाँ सुन कर कमला को अपने निकट बुलाया और बिठा कर कहा-"बेटी ! कितना अच्छा पढ़ती हो ! ज़रा उन पंक्तियों का माने तो समझा देना।"

कमला ने उनके इस तरह पूछते ही कहा-"यह कौन-सी बड़ी बात है ? नमक और कपूर दोनों देखने में एक से सफेद होते हैं। फिर भी नमक मुँह में डालने से मुँह का स्वाद बिगड़ जाता है। लेकिन कपूर मुँह में डाल लेने से उसकी सुवास से चित्त प्रसन्न हो जाता है। इसी तरह आदमी भी अच्छे-बुरे सब एक से दिखाई देते हैं। लेकिन उनके गुण अलग-अलग होते हैं।" उसने समझाया।

"वाह ! पद्य का अर्थ कैसे खोल कर समझा दिया, बिटिया!" यह कह कर केशवसिंह उठकर अन्दर गए और

शशिलोचन शर्मा

चार बढ़ियाँ केले लाकर उसे पुरस्कार में खाने को दिए।

उस पद्य का भाव केशवसिंहजी को बहुत पसन्द आया। "मनुष्य सब एक से दिखाई देते हैं। लेकिन उन में भलेमानुस अलग होते हैं। यह बात कवि ने कैसी अच्छी उपमा देकर समझाई ?" यों मन ही मन सोचते हुए जब केशवसिंह बाड़ी में गए तो उन्हें दो मुर्गे दिखाई दिए। उनसे थोड़ी दूर पर दो मुर्गियाँ अपने बच्चों के साथ दाने चुगती हुई दिखाई पड़ीं।

इतने में केशवसिंहजी का नौकर आया और उन मुर्गों के सामने मुट्ठी भर दाने बिखेर कर चला गया। यह देख कर मुर्गियाँ और उनके बच्चे भी जल्दी-जल्दी उस ओर दौड़े। लेकिन उन दोनों में से एक मुर्गे ने उन्हें नज़दीक नहीं आने दिया और चोञ्च से नोच-नोच कर मार भगा दिया। फिर वह आराम से चुन कर दाने निगलने लगा। तब वे सभी दूसरे मुर्गे के नज़दीक जा पहुँचे। उसने पहले मुर्गे की तरह सबको मार नहीं भगाया। बल्कि उन्हें अच्छी तरह चुगने दिया और खड़ा खड़ा देखता रहा। इस तरह एक मुर्गे को स्वार्थ से बरतते और दूसरे को स्वार्थ का त्याग करते देख कर केशवसिंह को बड़ा अचरज हुआ। देखने में दोनों मुर्गे एक से थे। लेकिन दोनों में व्यवहार में कितना अन्तर था !

सबेरे कमला ने जो कविता पढ़ी थी, वह याद आ गई और वे उसी को बदल कर पढ़ने लगे-"मुर्गे सभी एक से होते, पर उनके गुण होते भिन्न।" लेकिन थोड़ी देर बाद केशवसिंह अपने काम-काज में पड़ गए और कविता की पंक्तियों और मुर्गों की भिन्नता की बात भूल गए।

दूसरे दिन उनके घर किसी काम से एक बड़े मेहमान आए। उनकी दावत करने के लिए केशवसिंह की पत्नी ने रसोइये को मुर्गा मारने का हुक्म दिया। इसकी भनक केशवसिंहजी के कानों में भी पड़ी।

झट उन्होंने रसोइए को बुलाया और कहा-"उस बुरे मुर्गे को मार डालो !"

उनकी बात रसोइए की समझ में नहीं आई। उसने सोचा-"मुर्गों में अच्छे मुर्गे और बुरे मुर्गे कैसे होते हैं?" यह सोच कर उसने पूछा-"आप किस मुर्गे की बात कह रहे हैं? मेरी नज़र में तो दोनों एक से दिखाई देते हैं।"

"अच्छा चलो ! मैं तुम्हें दिखाता हूँ उसे !" यह कह कर केशवसिंहजी उसे साथ लेकर बाड़ी में गए। दोनों मुर्गे थोड़ी दूर पर दिखाई दिए। केशवसिंहजी ने नजदीक जाकर देखा तो खुद उन्हीं की समझ में न आया किं उन में बुरा मुर्गा कौन सा है और अच्छा कौन सा?

उन्होंने तब सोच कर कहा-"अच्छा! जाओ ! एक मुठ्ठी भर दाने ले आओ। मैं तुम्हें अच्छे मुर्गे और बुरे मुर्गे का अन्तर समझाता हूँ।"

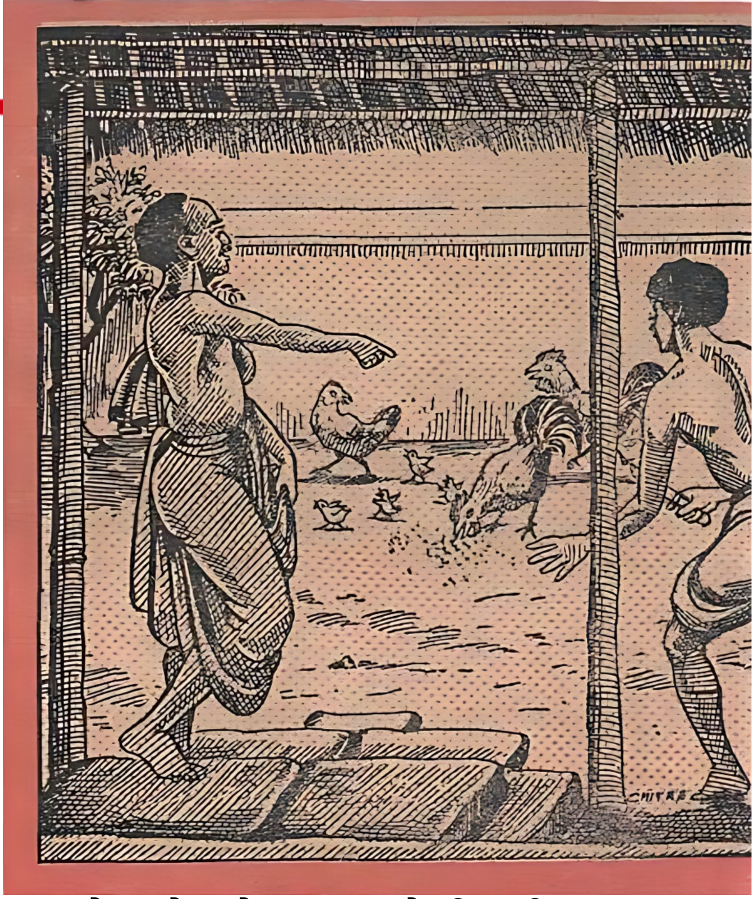

रसोइए ने दाने लाकर ज्यों ही ज़मीन पर बिखेर दिए त्यों ही एक मुर्गा तीर की तरह वेग से आकर उनको चुनने लगा। जब दूसरा मुर्गा भी वहाँ आया तो उसने उसे चोञ्च से नोच-नोच कर, झपट्टे मार-मार कर दूर खदेड़ दिया और खुद आकर दाने चुनने लगा।

"हाँ ! वही तो है बुरा मुर्गा !" केशवसिंहजी ने कहा। रसोइए ने तुरन्त उस मुर्गे को पकड़ लिया। अब केशवसिंहजी अच्छे मुर्गे को ही प्रेम पालने और सुख से समय बिताने लगे।

सात

स्मिथ साहब बड़े मौजी आदमी थे। उनको बहस करने में बड़ा मज़ा आता था। हाँ, किसी भी विषय में वे हिंदुस्तान का बड़प्पन नहीं मानते थे।

एक बार ताजमहल के बारे में बहस छिड़ी। "संसार की अद्भुत वस्तुओं में वह भी एक है।" किसी ने कहा। "हो सकता है; लेकिन इस में हिंदुस्तानियों का बड़प्पन कुछ भी नहीं है। क्योंकि उस को बनानेवाला कारीगर रोम से आया था।" साहब ने कहा। "अच्छा ! कारीगर न सही; काम करने वाले तो हिंदुस्तानी थे !" आदमी ने पूछा। "काम करने वाले हिंदुस्तानी होंगे; लेकिन इस से क्या हुआ ?" साहब ने कहा। "अच्छा; वह जिसकी यादगारी थी वह औरत तो हिंदुस्तान की थी ?" उस आदमी ने पूछा। "नहीं, वह फारस की थी !" साहब ने कहा। उनकी जिद्द देख कर उस आदमी ने हार कर पूछा- "अच्छा आप यह तो मानेंगे कि उसको बनाने में जो चीज़ें लगीं वे हिंदुस्तान की थीं ?" "नहीं, सङ्गमरमर फारस से लाए गए थे !" साहब ने अडिग भाव से नवाब दिया।

"खैर, उसके बनाने में जो रुपया खर्च हुआ वह तो हिंदुस्तान का था ?" उस आदमी ने पूछा। "नहीं, नहीं ! वह फारस से तैमूर द्वारा लूट कर लाया गया था।" साहब ने जवाब दिया। "अच्छा; जाने दीजिए ! आप कम से कम यह तो मानेंगे कि वह हिंदुस्तान की मिट्टी पर खड़ा है !" उस आदमी ने झख मार कर पूछा। "हाँ, हाँ ! यह तो मानना ही पड़ेगा ! मनबूरी हैं; क्या करूँ ?" साहब ने मान लिया।

छाया देवी

आठ

बिजनौर गाँव में बापूलाल नाम का एक रईस था जो बड़ा कञ्जूस था।

एक बार उसे किसी काम से शहर जाना पड़ा। यह जान कर उसके मित्र श्यामलाल ने आकर कहा-"अजी ! शहर के लोग बड़े ठग होते हैं। दूकान में जाओगे तो हरेक चीज़ का दाम दुगुना बताएँगे और तुम्हें ठग लेंगे ! इसलिए सावधान !" "मुझे वे क्या ठगेंगे?" यह कह कर बापूलाल शहर चले।

शहर पहुँचे ! काम-काज में लगे-लगे दोपहर हो गई। धूप बड़ी कड़ी थी। इसलिए बापूलाल ने एक दूकान में जाकर छाते का दाम पूछा। "दस रुपए ! बाबूजी!" दूकानदार ने जवाब दिया। तुरन्त बापूलाल ने सोचा-"श्यामलाल ने कहा था कि यहाँ हर चीज़ का दाम दुगुना बताया जाता है। इसलिए इस छाते का असली दाम पाँच रुपए होगा।" यह सोच कर उन्होंने कहा-"पाँच रुपए में दोगे तो लूँगा। नहीं तो जाता हूँ।" यह कह कर वे चलने को तैयार हुए। बस, दूकानदार ने मंजूर कर लिया।

यह देख कर बापूलाल ने फिर सोचा-"जब पाँच रुपए में दे रहा है तो इसका असली दाम उसका आधा ही होगा।" यह सोच कर उन्होंने कहा-"ढाई रुपए में दोगे तो लूँगा। नहीं तो जाता हूँ।" यह सुन कर दूकानदार झल्ला उठा और बोला-"बड़े आए हैं सौदा करने वाले! ढाई रुपए ही क्यों ? मुफ्त में क्यों नहीं ले जाते ?" यह सुन कर बाबूलाल ने सोचा-"यह छाता मुफ्त में देने को कह रहा है। इस के माने है, इसे दो छाते देने होंगे।" यह सोच कर उसने कहा-"मुफ्त में एक नहीं, दो छाते लूँगा।" यह सुन कर वहाँ जितने लोग थे सब खिलखिला कर हँसने लगे।

काशीनगर में किसी समय कबीरदास नाम के एक राम-भक्त रहते थे। उनके कमाल नाम का एक लड़का था। वह भी राम भक्त ही था। कबीर बहुत गरीब थे। लेकिन साधु-सन्तों का सत्कार करने में वे सबसे आगे रहते थे। कमाल भी इस विषय में उनकी बड़ी सहायता करता था। कबीर के अतिथि सत्कार के बारे में निम्न-लिखित कहानी कही जाती है।

एक रोज़ आधी रात को एकाएक कबीर की झोंपड़ी के पास साधुओं का एक बड़ा दल आ पहुँचा। उनमें से एक ने दरवाज़ा खटखटा कर पूछा-"अजी ! हमने सुना है कि यहाँ कोई कबीर नाम के बड़े भक्त रहते हैं जो दूर से आए हुए साधुओं को कभी भूखा नहीं लौटाते हैं। क्या आप हमें उनका घर दिखा देंगे ?"

कबीर उठे और दरवाज़ा खोल कर कहने लगे-"मैं ही कबीरदास हूँ। आइए ! आप लोग अन्दर आइए !" यह कह कर उन्होंने सब को ले जाकर घर में बिठा दिया। फिर अपनी पत्नी को जगा कर पूछा-"बहुत से भूखे साधू आ गए हैं ! घर में कुछ खाना है ?"

"घर में तो कुछ नहीं है। मालूम है, भगवान हमारी परीक्षा ले रहा है। आप घबराइए नहीं। ऐसे अवसर पर कहीं से कर्ज लेने में या चोरी करने में भी कोई दोष नहीं।" साधुओं की सेवा से सारा पाप धुल जाता है।" कबीर की पत्नी ने जवाब दिया। माँ की बात सुन कर कमाल ने भी बढ़ावा दिया-"हाँ, इन साधुओं को भूखे नहीं लौटने देना चाहिए। इसके लिए चोरी भी करनी पड़ी तो कोई हर्ज़ नहीं।"

कबीर का मन नहीं मानता था। लेकिन उन्हें राज़ी होना पड़ा। भगवान का नाम

गोबर्धन पन्त

लेकर उस बाज़ार के छोर पर रहने वाले एक सेठ के घर में चोरी करने के लिए बाप-बेटे दोनों चले। उन्होंने बड़ी सावधानी से सेँध लगाई। कमाल को सेँध की राह अन्दर भेज कर कबीर बाहर पहरा देते हुए खड़े रहे।

अन्दर जाकर सेठ के घर में सोने-चाँदी के हीरे-जवाहर जड़े सामान देख कर कमाल की आँखें चौंधिया गईं। लेकिन उसने उन्हें हाथ से छुआ तक नहीं। वह सीधे खाने-पीने की चीज़ों वाली कोठरियों में गया और वहाँ से एक-एक चीज़ उठा कर बाहर पिता को देने लगा। जब सब चीजें पहुँच गईं तो कमाल ने खुशी के मारे सेठ को थपकी लगा कर जगा दिया और कहा-"सेठजी ! मैं भूखे साधुओं को खिलाने के लिए खाने-पीने की कुछ चीजें चुरा ले जा रहा हूँ। मैंने आपकी और कोई चीज़ छुई नहीं। यह मैं आपसे कह देना चाहता था। इसलिए जगाया। कष्ट के लिए क्षमा करें।" यह कह कर जल्दी-जल्दी सेँध में घुस कर बाहर जाने की कोशिश करने लगा।

उसकी बातें सुन कर सेठ को बहुत अचरज हुआ। उसने उसको

पकड़ना चाहा। तब तक कमाल सेँध से बाहर हो गया था। लेकिन उसकी टाँगें अन्दर ही थीं। सेठ उन्हें पकड़ कर अन्दर खींचने लगा। इधर कबीर हाथ पकड़ कर उसे बाहर खींचने लगा। तब कमाल ने अपने पिता से कहा-"पिता जी ! अब कोई फ़ायदा नहीं। देरी कीजिएगा तो आप भी पकड़े जाइएगा। इसलिए मेरा सिर काट लीजिए जिससे कोई पहचान न सके और आप भाग जाइए।" कबीर की आँखों से आँसू बहने लगे। लेकिन कोई चारा न था। उन्होंने बेटे का सिर काट लिया और उसे उठा कर भागे। घर पहुँच कर उन्होंने

पत्नी को धीरज दिया और उन चीज़ों से जल्दी-जल्दी रसोई बनवाई। फिर साधुओं को पाँत में बिठा कर, वे बगल में खड़े होकर बोले-"देरी हो गई है। माफ कीजिए।"

* * * * *

अब उधर का किस्सा सुनो। ज्यों ही कबीर ने बेटे का सिर काट लिया त्यों ही सेठ धड़ाम से नीचे गिर पड़ा। जब उसने देखा कि सिर्फ धड़ उसके हाथ में है तो वह जोर से चीखने लगा। उसकी चीख सुन कर आस-पड़ोस के सब लोग जाग गए और दौड़े आए। जब उन्होंने सारा किस्सा सुना तो अचरज में डूब गए। सवेरे तक यह खबर सारे शहर में फैल गई। यहाँ तक कि राजा को भी मालम हो गई। "हमारे राज में कैसे कैसे अनर्थ हो रहे हैं ?" राजा ने सोचा और तुरन्त सिपाहियों को बुला कर कहा-"उस घड़ को ले जाकर किले के कंगूरे पर लटका दो और तुम लोग पास ही खड़े छिप कर देखते रहो ! जो वहाँ आकर धड़ को देख कर रोने-धोने लगें, उन्हें तुरन्त पकड़ लाओ !" उसने हुक्म दिया। राजा के हुक्म की बात भी सारे शहर में फैल गई। छोटे-बड़े, औरत-मर्द सभी जगह जगह खड़े होकर इसी की चर्चा करने लगे।

* * * * *

उधर कबीर के घर में साधुओं ने उसकी सेवा से सन्तृप्त होकर कहा- "भाई ! आधी रात के वक्त आकर जगाने पर भी तुमने कष्ट नहीं माना और हमारी बड़ी सेवा की। इससे हम को बहुत खुशी हुई। तुम्हारे सत्कार से हम सन्तुष्ट हो गए। भगवान तुम्हारा भला करेंगे और तुम्हारी सब इच्छा पूर्ण करेंगे।" उन्होंने आशीर्वाद दिया।

इतने में उन साधुओं में से एक ने जो बहुत बूढ़ा जान पड़ता था, पूछा -"हाँ, हम

आप के लड़के की बात तो भूल ही गए थे। वह कहाँ है ?" यह सुन कर कबीर ने कोई न कोई बहाना करके उसकी बात टालनी चाही।

कबीर जब साधुओं को बिदा करने के लिए बाहर के फाटक तक पहुँचे तो उन्हें वहाँ बड़ी भीड़ दिखाई दी। तब बूढ़े साधू ने उस भीड़ में जाकर सारी बात नान ली और लौट कर अचम्भे के साथ कहा-"अरे ! यह कैसा अनर्थ हुआ ? किस हत्यारे ने ऐसा काम किया? धड़ पर जगह जगह त्रिपुण्ड लगे हुए हैं। इस से मालूम होता है कि वह वैष्णवों का लड़का है। उसके कपड़े वगैरह देखने से जुलाहा मालम होता है। ऐसा अच्छा लड़का चोरी करते पकड़ा गया और किसी ने उसका सिर काट लिया ! इस में जरूर कोई न कोई रहस्य छिपा मालूम होता है !" उस साधू ने शोक प्रगट करते हुए कहा।

उसकी बात सुन कर कबीर चौंक पड़े। उन्होंने कहा-"वह वैष्णव हो या जुलाहा। इस में क्या लगा है ? उसने परोपकार के लिए प्राण दे दिए। इसी से उसका जन्म सफल हो गया।"

यह सुन कर बूढ़े साधू को और भी अचरज हुआ। उसने उस धड़ की तरफ रुख करके कहा-"रे धड़ ! क्या कबीर का कहना सच है ? क्या सचमुच तेरा जन्म सफल है ?" यह सुन कर वह धड़ कँगूरे से नीचे कूद पड़ा और नाचते हुए बोला-"हाँ ! हाँ!"

यह देख कर वहाँ जितने लोग जमा थे सब आश्चर्य में डूब गए। तब उस बूढ़े साधू ने कबीर से कहा-"कबीर ! मालूम होता है तुम सारा रहस्य जानते हो ! अब मुझे सच-सच बता दो !" यह सुन कर कबीर ने उसके पैरों पर गिर कर माफी

माँगते हुए रात का सारा किस्सा उसे बिना सङ्कोच के सुना दिया।

तब उस साधू ने क्रोध के मारे काँपते हुए कहा-"रे नीच ! तू सिर्फ चोर ही ही नहीं, महापापी और पुत्र घाती भी है। तूने अपने हाथ का खाना खिला कर हम सबको भ्रष्ट कर दिया। मुझे अब भी विश्वास नहीं होता कि तू ऐसा कुकर्म कैसे कर सका है ?" तब कबीर ने घर को खबर भेज कर अपनी पत्नी को बुलाया और अपने पुत्र का सिर मँगवा कर उस साधू को दिखाया।

तब उस साधू ने सिर को हाथ में लेकर इधर-उधर फिराते हुए कहा-"सिर तो बहुत छोटा है ! क्या यह सचमुच इसी धड़ का सिर है ? इस धड़ पर इतना छोटा सिर कैसे लग सकता है ? अच्छा, लगा कर तो देख लें !" यह कह कर उसने सिर को धड़ से लगा दिया। तुरन्त मुण्ड रुण्ड से जुड़ गया और कमाल इस तरह उठ बैठा जैसे अभी नींद से उठा हो। उसने माता-पिता को प्रणाम किया।

यह देख कर वहाँ जमा हुए जन-समूह के हर्ष का ठिकाना न रहा। कबीर-दम्पति का तो कहना ही क्या ? इतने में देखते देखते साधुओं की टोली गायब हो गई और उनकी जगह भगवान रामचन्द्र, सीता, लक्ष्मण और अपने परिजनों के साथ दिखाई देने लगे। तुरन्त कबीर, उनकी स्त्री और पुत्र दण्डवत अनेक प्रकार के स्तोत्र पढ़ने लगे। यह खबर जान कर वह सेठ दौड़ा-दौड़ा आया। उसने कमाल के पैरों पर गिर कर माफी माँगी-"भगवन्! मैं महा-पापी हूँ। मुझे क्षमा कीजिए।" तब कमाल ने कहा-"तुम कुछ भी सोच न करो ! तुम्हारे ही कारण तो हमें भगवान के दर्शन का अवसर मिला!" यह कह कर उसने उसे तारक- मन्त्र का उपदेश किया। उस दिन से वह व्यापारी भी भक्त बन गया।

CHANDAMAMA (HINDI) FEBRUARY 1952 REGD. No. M. 5452

रङ्गीन चित्र - कथा चित्र — १